International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 14-12-2020; Accepted: 29-12-2020; Published: 23-01-2021
www.hindijournal.com
Volume 7; Issue 1; 2021; Page No. 30-31

मधुकर सिंह की कहानियों में निहित यथास्थितिपरक संघर्ष का स्वरूप

सगीर अहमद[1], डॉ. अजय कुमार[2]

[1] शोधार्थी, हिंदी विभाग जामिया मिल्लिया इस्लामिया नई दिल्ली, भारत

[2] नावरिया हिंदी विभाग जामिया मिल्लिया इस्लामिया नई दिल्ली, भारत

सारांश

मधुकर सिंह की कहानियों में जहां एक तरफ शोषण, भ्रष्टाचार तथा संघर्ष के प्रमुख बिंदु मुखर हुए हैं वहीं दूसरी तरफ इसके निराकरण के रास्ते भी दिखाए गए हैं। किसानों को पर्याप्त सुविधाएं दिलाने के लिए मधुकर सिंह कहीं 'कृषक समाज संगठन' की बात करते हैं तो कहीं-कहीं शोषण से मुक्ति के लिए जमींदारों के खिलाफ जातीय संगठन के निर्माण का भाव जगाते हैं। कुल मिलाकर कहा जाए तो मधुकर सिंह की यथास्थितिपरक संघर्ष का आईना दिखाती कहानियां यथार्थोंमुख तथा भविष्योन्मुख समाज का चित्रण करती हैं।

मूलशब्द: यथास्थितिपरक, पारिस्थितिक बोध, गुट निरपेक्षता, मूल्य बोध, शोषणमुखी यथार्थ।

प्रस्तावना

विभिन्न परिस्थितियों से मुठभेड़ करते हुए जीवनानुभवों को अगर देखना है तो निःसंदेह मधुकर सिंह की कहानियां एक महत्वपूर्ण उदाहरण हैं। मधुकर सिंह एक ऐसे लेखक हैं जो शहरी चकाचौंध से दूर अपने छोटे से गांव में रहकर निरंतर कहानियां लिखते रहे हैं। उनके लेखन क्रम में ग्रमीण समाज के वे सभी सुख-दुख समाहित हैं जो तत्कालीन पारिस्थितिक बोध से उपजा है। उनकी कहानियों का संसार लगभग सत्तर के दशक से लेकर जीवन पर्यंत (2014) तक फैला हुआ है। एक समांतर धारा के कहानीकार होने के साथ-साथ इनकी कहानियों में प्रेमचंद की परंपरा का अनुसरण साफ तौर पर जाहिर होता है।

मधुकर सिंह जिस समय लेखन के क्षेत्र में कदम रख रहे थे उस समय कई साहित्यिक आंदोलन सक्रिय थे, उन आंदोलनों में अपने वैचारिकी तथा लेखन के द्वारा किसी आंदोलन में सक्रिय हो जाना एक महत्वपूर्ण चुनौती थी। यह चुनौती इसलिए महत्वपूर्ण थी कि वह ऐसा समय था जब कई प्रतिष्ठित साहित्यकार अपनी भागीदारी विभिन्न आंदोलनों में दिखा रहे थे, उसमें एक शुरूआती दौर के लेखक के लिए किसी आंदोलन में सक्रिय हो जाना किसी चुनौतीपूर्ण संघर्ष से कम नहीं था। मधुकर सिंह इस बात को स्वीकार करते हुए लिखते हैं-'ये दो पत्रिकाएँ(कहानी-श्रीपत रॉय, सारिका-कमलेश्वर) न होतीं तो मेरा लेखन फैलने से रह जाता, क्योंकि लघु पत्रिकाएँ स्थानीयता, अवसरवादिता और गुट निरपेक्षता की ज्यादा हद तक शिकार होती हैं।'[1]

लेखिकीय संघर्ष के साथ-साथ मधुकर सिंह के जीवनानुभवों का संघर्ष भी कम नहीं था। उन्होंने अपने जीवन में जो कुछ भी भोगा, चाहे वह जातिगत भेदभाव हो(चूंकि वे एक दलित थे) भाई पट्टीदारों द्वारा जमीन लोलुपता की भावना से मिली प्रताड़ना हो, राजनीतिक भ्रष्टाचार से उत्पन्न संघर्ष हो, वर्ग एवं जातीय संघर्ष, सामंती व्यवस्था के प्रति संघर्ष, बंधुआ मजदूरी के प्रति संघर्ष आदि कुछ भी हो वह उनके साथ साथ कहानियों का शक्ल लेता चला गया है। अतः इनकी अधिकांश कहानियां में इन्हीं यथास्थितिपूर्ण संघर्षों का प्रस्फुटन दिखाई देता है।

मधुकर सिंह की संपूर्ण कहानियों पर अगर हम दृष्टिपात करें तो पाते हैं कि उनकी अधिकांश कहानियों में संघर्ष एक महत्वपूर्ण केंद्र बिंदु बन कर उभरा है। इस संदर्भ में हम उनकी 'तक्षक', 'उन्हीं दिनों', 'तय नहीं', 'सैलाब', 'कालचक्र कथा', 'पूरा सन्नाटा', 'इन दिनों', 'काला आदमी', 'लोकतंत्र', 'कल', 'बफर स्टेट', 'खच्चर', 'स्वर्ग का विश्वास', 'दुर्गंध', 'बाढ़', 'सहयात्री', 'उसका सपना', आदि कहानियों को देख सकते हैं। 'तक्षक' कहानी में उन्होंने एक साथ दो संघर्षों (पिता होने और नौकरी के लिए) का चित्रण किया है-'बी. के. के सामने लज्जित हूं कि इतने वर्षों बाद मिल रहा हूं। मेरा मतलब यह था कि उससे मुलाकात भी हो जाएगी और थोड़ी देर रुक कर पारिवारिक तनाव की भी जानकारी कर लूंगा। लेकिन घटना उलट गई और मैंने देखा कि वह फुटपाथ पर पैर घसीटते हुए सामने से चला आ रहा है। मैंने उसकी चप्पल देखकर सूरत देखी। दो वर्षों का समय कम नहीं होता। इस बीच वह कैसा बूढ़ा और गरीब हो गया है।'[2] समय की मार और परिस्थितियों के टकराहट इस कहानी में उभर कर सामने आई है। साथ ही बेरोजगारी की मार का दंश मानसिक रूप से किस कदर हावी है पूरी कहानी में यथार्थ ढंग से चित्रित हुआ है। इसी प्रकार 'इन दिनों' कहानी में लेखक ने भूख एवं गरीबी से संघर्ष करते व्यक्ति के मनःस्थिति का चित्रण किया है-'आदमी भागकर सड़क पर आ गया और एक गुजरती हुई भीड़ में शामिल हो गया। भीड़ बहुत प्रसन्न हो गई। आदमी ने छटपटा कर जोर से नारा लगाया 'आदमी का जुलूस जिंदाबाद' भीड़ और खुश हो गई। 'आदमी चिल्लाया रोटी दो या गोली दो' लेकिन आदमी अचानक रुक गया और भीड़ से अलग होते हुए बोला, मैं गाय को जिंदाबाद नहीं कहूंगा।' क्यों? भीड़ ने पूछा 'गाय मेरा खाना छीनती है और कुत्तों का साथ देती है।'[3] यह कहानी पाठक को एक मार्मिक दिशा बोध तथा मूल्य बोध की ओर ले जाती है और एक साथ कई प्रश्नों को हमारे समक्ष प्रस्तुत करती है। पाठक इस कहानी को पढ़ते हुए ना जाने कितनी बार तुलसीदास (बारे ते ललात बिललात द्वार-द्वार दीन...) और निराला की कविता की पंक्तियों (चाट रहे जूठी पत्तल वे सभी सड़क पर खड़े हुए/और झपट लेने को उनसे भी कुत्ते हैं अड़े हुए) के करीब पाता है। इसी प्रकार 'सहयात्री' कहानी में एक लड़के को नौकरी ना मिल पाने के कारण तनावग्रस्त स्थिति का चित्रण देखा जा सकता है-'(ट्रेन में बैठी एक लड़की, लड़के से पूछती है) लगता है पहली बार इंटरव्यू देने जा रहे हो!

लड़का- नहीं-नहीं यह कोई नया नहीं है।
लड़की- तब घबराहट किस बात की है।

लड़का- इस बार नौकरी ना मिली तो पिता आत्महत्या कर लेंगे।'[4] वास्तव में नौकरी को लेकर यह यथार्थ चित्रण कहीं ना कहीं मधुकर सिंह के आरंभिक दिनों में भोगे गए संकटापन्न स्थितियों से रूबरू कराती है। साथ ही प्रसंग के अंत में 'पिता आत्महत्या कर लेंगे' व्यवस्था के प्रति कई प्रश्न चिन्ह खड़ा करती है।

इसी तरह इनकी कहानियों में व्यवस्थागत परिस्थितियों से उत्पन्न शोषण एवं अत्याचार का संघर्ष भी देखा जा सकता है। जिसमें इनके पात्र गांव के जमीदारों, सामंतों आदि से अपने हक के लिए संघर्ष करते हुए नजर आते हैं तथा संघर्ष के द्वारा पूरी यथास्थितिवादी व्यवस्था को बदल डालने की छटपटाहट मन में रखते हैं। डॉक्टर प्रसन्न ओझा के शब्दों में-'मधुकर सिंह की कहानियां आदमी के जिंदा

रहने के संघर्ष को बड़ी सच्चाई से सामने लाती हैं। उनकी कहानियों में सर्वत्र एक लड़ाई जाति है- जो वर्ग संघर्ष की जमीन पर सवर्णों और हरिजनों, भू- स्वामियों और भूमिहीन तथा छात्रों और शिक्षा व्यवस्था के बीच लड़ी जा रही है। इस लड़ाई में यथास्थितिवाद को तोड़ने की एक मार्मिक छटपटाहट है।'[5] 'हरिजन सेवक', 'कवि भुनेसर मास्टर', 'कीर्तन', 'अगनु कापड़', 'सुबल की भैंस', 'माटी कहे कुम्हार से', 'पहला पाठ', 'सत्ताचारी', 'असाढ़ का पहला दिन', आदि कहानियां इस संदर्भ में विशेष उल्लेखनीय हैं। शोषण की भयावह स्थिति का अंदाजा 'हरिजन सेवक' कहानी की इन पंक्तियों से सहज ही लगाया जा सकता है- 'हरिजनों की जीविका का साधन मात्र इन्हीं (जमीदारों) की मजूरी, बनहारी और चरवाही है। लोग बाप-दादों के जमाने से ही हमसे काम भी लेते हैं और सूद भी लेते हैं। भादों में खाने के लिए पांच मन चावल कर्ज लिया तो अगहन में साढ़े बारह मन चावल वसूलते हैं। बारहो महीने इनके यहां पूरी हरिजन टोली जानवर के माफिक खटने के बाद भी अधपेटा और अधनंगा है। हमारी औरतों की आबरू भी उन्हीं की मर्जी पर है।'[6] इसके बाद अगर वह इसका किसी भी प्रकार से विरोध करते हैं तो ठाकुरों द्वारा उनके टोली में आग लगा दी जाती है और इस आरोप में उन्हीं को ही उल्टा फंसा दिया जाता है। 'होनी घट चुकी थी! दुसाध टोली में एक भी मकान सलामत नहीं था। दो बच्चे और एक बूढ़ी औरत भाग नहीं पाने कारण जल मरी थी।... सुबह तक पूरी दुसाध टोली जलकर राख हो चुकी थी। बाहरी कोई भी आदमी मदद के लिए नहीं आया था।'[7] वास्तव में देखा जाए तो मधुकर सिंह इस कहानी के माध्यम से शोषणमुखी यथार्थ की सच्चाई को बहुत ही निर्ममता के साथ उघाड़ा है। डॉक्टर साधना शाह के शब्दों में-'समाज में व्याप्त शोषणमुखी यथार्थ की सच्चाईयों को उनकी निर्ममता के साथ पकड़ने का प्रयास इन कहानियों में हुआ है। जाहिर है इसके केंद्र में आमजन है। इस आमजन की शोषित स्थिति को और उसे तोड़ने के लिए संघर्ष की आवश्यकता को अभिव्यक्ति देने के लिए लेखक शोषक और शोषित के संघर्ष की विभिन्न परतें खोलते हैं।[8] 'कवि भुनेसर मास्टर' कहानी का भुनेसर महतो शोषण एवं अत्याचार के खिलाफ गांव वालों को जागरूक करने के लिए हर रविवार को स्कूल की छुट्टी के बाद गांव चला आता है और यह बताता है कि उक्त कुव्यवस्थाओं से किस प्रकार लड़ा जाना चाहिए-'भुनेसर रविवार को या छुट्टियों में गांव चला आता था! वह युवक साथियों का शिविर लगाता क्लास लेता और किताबें पढ़ने के लिए देता। भुनेसर उन्हें इस बात की ट्रेनिंग देता था कि अत्याचार और जुल्म के खिलाफ किस प्रकार संगठित होकर काम करना चाहिए।'[9] मधुकर सिंह की इन कहानियों में उनकी संघर्षशीलता तथा रचनागत ईमानदारी साफ-साफ दिखाई देती है जो उन्हें हमेशा सामाजिक विसंगतियों की ओर लिखने के लिए प्रेरित करती रहती है। डॉक्टर नरेंद्र मोहन के शब्दों में-'मधुकर सिंह की कहानियां वास्तविक स्थितियों से उत्पन्न उनकी संघर्षशील मानसिकता और रचनागत ईमानदारी को प्रमाणित करती हैं।'[10] 'असाढ़ का पहला दिन' भी एक ऐसी कहानी है जो उसके शोषण और विद्रोह के प्रतिकार की कथा कहती है 'किसान सभा के सिहुली राम ने एलानिया तौर पर कह दिया भाई रे! अब तो चाहे जेल में सड़ना पड़े, चाहे बंदूक की चोट पर मरना पड़े इस साल असाढ़ में खेत पर हल चढ़ेगा! बरदास करने की कोई भी सीमा होती है सन अठत्तर से आज तक कोट-कचहरी में ईंख की तरह पेराई होती रही है। ऊपर से आग लगी, सूअरों की तरह खेदा हम भी आदमी हैं कि नहीं? बटाईदार कानून और न्यूनतम मजदूरी हमें पेरने के लिए खड़ा किया गया है।... खाने के लिए सत्तू-भात कुछ भी नहीं। हरवाही कराते-कराते करेज दुह लेते हैं। रोपनी के समय भी वही एक शेर पक्की। बाकी खाना-दाना कुछ नहीं।[11] अपने हक की लड़ाई के लिए सिहुली राम एवं गांव के अन्य मजदूर, हरवाहे बीडीओ ऑफिस जाकर अनशन करते हैं लेकिन वहां कोई सुनवाई नहीं होती है। धीरे-धीरे विद्रोह का स्वर ऊंचा होता जाता है। अंततः महानन रॉय सिहुली राम को गोली मारकर इस विद्रोह को दबाने की कोशिश करते हैं। फिर भी विद्रोह की आग फैलती जाती है राजीव आनंद के शब्दों में-'मधुकर सिंह जनता के लिए लिखते थे। उन्होंने मजदूरों, किसानों, भूमिहीनों, गरीबों, औरतों, दलित-वंचित के लिए ना सिर्फ लिखा बल्कि उनमें प्रतिरोध करने की क्षमता को भी विकसित किया।'[12] अन्य लेखकों की भांति समकालीन दौर में जिस प्रकार मधुकर सिंह ने एक साथ शोषण, अत्याचार, व्यवस्था गत विसंगतियों आदि के बीच शिकार हुए आम आदमी तथा उसके प्रतिरोध को दिखाया है वह हमें अन्यत्र कहीं नहीं दिखाई देता है।

मूलतः ग्रामीण जीवन के कथाकार होने के कारण मधुकर सिंह की कहानियों के संघर्ष का स्वरूप एक विस्तृत फलक पर न फैलकर स्थानीय है और इस स्थानीयता में हमें संघर्ष के कई रूप देखने को मिलते हैं। जैसे- अपने हितों के लिए स्थानीय लोगों की इच्छाओं को मारकर ऊपर उठने की प्रवृत्ति फलस्वरुप उत्पन्न संघर्ष की स्थिति, ग्रामीण हितों की अनदेखी करने के चलते उत्पन्न संघर्ष की स्थिति आदि। इस दृष्टि से 'लहू पुकारे आदमी', 'पंचयती परमेश्वरो का दुख', 'कीर्तन', 'दुश्मन', आदि कहानियों को देखा जा सकता है। 'दुश्मन' कहानी में भोले-भाले ग्रामीण लोगों की अभावग्रस्त करुण स्थिति को राजनीति के क्रूर संदर्भ में देखा जा सकता है। कहानी का पात्र 'ठाकुर' जब गांव वालों को प्रताड़ित करता है तो 'भीखम' को जगेसर (गांव का ही एक दलित जो मिनिस्टर बन गया है) से उम्मीद होती है कि वह उसकी तरफदारी करेगा। किन्तु जगेसर से नकारात्मक उत्तर पाकर संघर्ष करने का ऐलान कर देता है। इस प्रकार देखा जाए तो मधुकर सिंह की कहानियों में यथास्थितिपरक संघर्ष के कई रूप दिखाई देते हैं।

संदर्भ सूची

1. डॉ संजय नवले, उपन्यासकार मधुकर सिंह, विकास प्रकाशन कानपुर, प्रथम संस्करण 2004, पृष्ठ 22
2. मधुकर सिंह, प्रतिनिधि कहानियां, भारती प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण 1982, पृष्ठ 3
3. 'वही' पृष्ठ 27
4. 'वही' पृष्ठ 54
5. मधुकर सिंह, पहला पाठ कहानी संग्रह (भूमिका) वाणी प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण 1979
6. मधुकर सिंह, प्रतिनिधि कहानियां, भारती प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण 1982, पृष्ठ 105
7. 'वही' पृष्ठ 109
8. डॉ साधना शाह, हिंदी कहानी संरचना और संवेदना, वाणी प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण 2000, पृष्ठ 86
9. मधुकर सिंह, प्रतिनिधि कहानियां, भारती प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण 1982, पृष्ठ 121
10. डॉक्टर नरेंद्र मोहन, आधुनिकता के संदर्भ में हिंदी कहानी, जयश्री प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण 1982, पृष्ठ 69
11. मधुकर सिंह, आषाढ़ का पहला दिन (कहानी संग्रह) विद्यार्थी प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण 1988, पृष्ठ 9
12. राजीव आनंद rachnakar org blog post.com